जैसलमेर : पुरातान्त्विक तथ्य

भँवरलाल नाहटा...✍

भारत की पश्चिमी सीमा का प्रहरी जैलसमेर नगर अपने कलापूर्ण जिनालयों और ताड़पत्रीय ग्रंथों के लिए विश्वविश्रुत है। गत सौ-सवासौ वर्षों में अनेक पुरातत्त्वज्ञ, कला-मर्मज्ञ, पर्यटक एवं तीर्थ यात्रीगण उस दुर्गम प्रदेश में अपनी प्राचीन ग्रंथादि एवं इतिहास की शोध-रुचि के कारण भयानक कष्ट उठाकर जाते रहे हैं। क्योंकि वहाँ मार्ग में जलाभाव स्वाभाविक है। वहाँ सैकड़ों तालाब आदि हैं, किन्तु वर्षा तीसरे वर्ष होती है और दुष्काल का ठावा-ठिकाना माना जाता रहा है। कहा भी जाता है कि--

'पग पूगल धड़ मेड़ते बाहां बाहड़मेर, भूल्यो चूक्यो बीकपूर ठावो जेसलमेर।'

वहाँ के ज्ञानभण्डार देखने विदेशी विद्वान् भी गए। जैनाचार्य श्री जिनकृपाचंद्र सूरिजी, श्री हरिसागरसूरिजी, मुनिश्री पुण्यविजयजी पुरातत्त्वाचार्य जिनविजयजी आदि ने सुव्यवस्थित करने का प्रशंसनीय कार्य किया तथा गायकवाड़ सरकार ने चिमनलाल डाह्या भाई तथा पं. लालचंद भगवान दास गांधी ने वहाँ के ग्रंथों की सूची भी प्रकाशित की थी। मुनिश्री पुण्यविजयजी ने विशेष रूप से कार्य किया, अंत में जोधपुर निवासी स्वर्गीय जौहरीमलजी पारख ने ग्रंथों का फिल्मीकरण भी करवाया।

सन् १९२९ में स्वनामधन्य श्री पूरनचंदजी नाहर ने वहाँ के शिलालेख व प्रतिमा लेखों का संग्रह करके इतिहास के साथ ४७९ अभिलेख, जैनलेखसंग्रह का तृतीय भाग जैसलमेर नाम से सचित्र प्रकाशित किया। उन दिनों मैं उनके संपर्क में आने से प्राय: रविवार को उनके यहाँ जाता और हस्तलिखित ग्रंथों व अन्य सामग्री का आवश्यकतानुसार निरीक्षण करता। उनका संग्रह देखकर हमने भी संग्रह कार्य प्रारंभ किया। फलस्वरूप आज हम सवा-डेढ़ लाख ग्रंथों तथा पुरातत्त्व सामग्री का संग्रहालय, कलाभवन, बीकानेर में स्थापित कर सके। नाहरजी ने जैनलेखसंग्रह ३ भाग निकाले। वे बंगाल के जैनों में सर्वप्रथम ग्रेजुएट और पुरातत्त्ववेत्ता थे। जब जैलसमेर का तृतीय खण्ड छप रहा था तब मैंने भी अपने संग्रह के ऐतिहासिक स्तवनादि प्रकाशित करवाए थे। नाहरजी ने मथुरा के अभिलेखों का हिन्दी व अँग्रेजी-अनुवाद सहित ग्रंथ तैयार किया था, पर वह अद्यावधि उनके स्वर्गवास को साठ वर्ष बीत जाने पर भी प्रकाशित नहीं हो सका है ?

जब श्री हरिसागरसूरिजी का जैसलमेर ज्ञानभण्डार के निरीक्षण/शोध के लिए विराजना हुआ तब काकाजी अगरचंदजी के साथ वहाँ जाकर २५ दिन हम रहे और नाहरजी के प्रकाशित किए हुए लेखों को मिलाकर संशोधन किया और छूटे हुए अवशिष्ट २७१ लेख संग्रह कर बीकानेर जैनलेखसंग्रह के साथ प्रकाशित किए।

नाहरजी का प्रकाशन आज से ६७ वर्ष पूर्व हुआ था। सन् १९३६ में तो उनका स्वर्गवास ही हो गया था।

आर्यावर्त में सर्वप्राचीन जैनधर्म है और इसमें अनादिकाल से मूर्तिपूजा का प्रचलन रहा है। अन्यधर्मों में मूर्तिपूजा जैन धर्म के बाद ही चली थी, यों देवलोक, नंदीश्वर, द्वीपादि में सर्वत्र अनादिकाल से प्रथा चली आना सिद्ध है। मूर्तिपूजा का विरोध मुस्लिम शासनकाल में ही हुआ और उनकी संस्कृति के प्रभाव से जैनधर्म में भी यह दुष्प्रभाव फैला।

किसी भी नगर गाँव के बसने से पूर्व अपने इष्टदेव का मंदिर निर्माण करना अनिवार्य था। जैसलमेर बसने से पूर्व लौद्रवाजी में प्राचीनतम मंदिर था। आज जो चार सौ वर्ष प्राचीन मंदिर है, वह जैसलमेर के निवासी धर्मनिष्ठ सेठ थाहरुशाह भणशाली द्वारा निर्मित है, उसके नीचे वाले भाग के घिसे हुए पत्थर स्वयं यह उद्घोष कर रहे हैं कि वे सहस्त्राब्दि पूर्व के निश्चित रूप से हैं। लौद्रवपुर तथा राजस्थान के विभिन्न स्थानों से आए हुए जैनश्रावकों ने वहाँ अपने निवासस्थान में अनेकों गृहचैत्यालय तथा किले में जिनालय का निर्माण कराया था। लौद्रवपुर वीरान हो गया।

नाहरजी ने किले के मंदिरों के फुटनोट में लिखा है कि वृद्धिरत्न माला में वृद्धिरत्नजी ने श्री पार्श्वनाथजी का मंदिर संवत् १२१२ में प्रतिष्ठा का समय लिखा है परंतु यह जैसलमेर नगर की स्थापना का समय है। मंदिर तो २५० वर्ष बाद बने थे। मंदिर-प्रतिष्ठा का वर्णन और संवत् प्रशस्ति में स्पष्ट है। नाहरजी का यह लेख वर्तमान परिवेश की अपेक्षा ठीक है, किन्तु मंदिर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जो नगर बसने के समय बसा था, उसकी अवस्थिति का कोई अभिलेख आदि प्राप्त नहीं होता। यवन शासक अलाउद्दीन खिलजी की ध्वंस लीला के शिकार प्राचीन मंदिर कितने क्या थे, उनका अवशिष्ट शिल्पगत प्रमाण नहीं मिलता, किन्तु युगप्रधानाचार्य-गुर्वावली आदि एवं ग्रंथों की प्रशस्तियों में प्राचीन मंदिर की प्रतिष्ठा के स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होते हैं।

ताड़पत्रीय ग्रंथप्रशस्तियों से सिद्ध होता है कि मणिधारी दादा श्री जिनचंद्र सूरि के पट्टधर आचार्य श्री जिनपतिसूरिजी के परम् भक्त सेठ क्षेमंधर के पुत्र जगद्धर ने यहाँ पार्श्वनाथ जिनालय का निर्माण कराया था। आचार्यश्री जिनपतिसूरिजी महाराज सं. १२६० में जैसलमेर पधारे उस समय यहाँ देवग्रह बना हुआ था, जिसमें फाल्गुन सुदि २ के दिन उन्होंने श्री पार्श्वनाथ भगवान की प्रतिमा स्थापित की। इस प्रतिष्ठा-स्थापना का महोत्सव सेठ जगद्धर ने बड़े समारोहपूर्वक किया था। ये बोथरा बच्छावत आदि के पूर्वज थे।

सं. १३२१ में जिनेश्वरसूरिजी (द्वितीय) ने जैसलमेर में जसोधवलकारित देवगृह के शिखर पर मिती ज्येष्ठ शुक्ल १२ के दिन भगवान पार्श्वनाथ की स्थापना एवं ध्वजारोपण किया था। इसी प्रकार सं. १३२३ मिति ज्येष्ठ सुदि १० के दिन जावालिपुर में जेसलमेर के विधिचैत्य पर आरोपण करने के लिए सा. नेमिकुमार सा. गणदेव के बनवाए हुए स्वर्णमय दण्डकलश की प्रतिष्ठा हुई। ये दोनों भ्राता सेठ यशोधवल के वंशज थे। (आवश्यकलघु वृतिप्रशस्ति पृ. ३८) सं. १३२५ में वैशाख सुदि १४ के दिन स्वर्णमय दण्डकलशादि का आरोपणोत्सव विशेषविस्तारपूर्वक सम्पन्न हुआ था। युगप्रधान-आचार्य-गुर्वावली से ज्ञात होता है कि उस समय जैसलमेर मरुस्थल के जनपदों में मुख्य महादुर्ग था। श्री जिनप्रबोध सूरिजी महाराज सं. १३४० के फाल्गुन में यहाँ पधारे तब महाराज कर्णदेव ने सामने आकर स्वागत किया और आग्रहपूर्वक चातुर्मास भी कराया। दादाश्री जिनकुशलसूरिजी महाराज ने सिंधुदेश-विहार के समय जैसलमेर पधारकर स्वहस्तकमलों से प्रतिष्ठित श्री पार्श्वनाथ भगवान को वंदन किया।

उपर्युक्त प्रमाणों से जैसलमेर बसने के पश्चात् वर्तमान मंदिरों के निर्माण से पूर्व वहाँ श्री पार्श्वनाथ स्वामी का स्वर्ण दण्डकलशयुक्त सौधशिखरी जिनालय होना सिद्ध होता है। ये मंदिर एकाधिक हो सकते हैं, क्योंकि स्वर्ण-दण्ड-कलश आदि दो-दो वर्ष के अंतर में तीन बार शायद ही आरोपित हुए हैं। ये किस स्थान पर थे, यह जानने के लिए हमारे पास कोई साधन नहीं है, किन्तु प्राचीन क्षतिग्रस्त जिनालय के स्थान पर हुए हों, अनुमान सहज ही किया जा सकता है।

पंद्रहवीं, सोलहवीं शती के जैलसमेर की जाहोजलाली अपने पूर्ण मध्याह्न में थी और उसी समय जैसलमेर दुर्ग पर विश्वविख्यात कलापूर्ण जिन मंदिरों का क्रमशः निर्माण हुआ था। इन मंदिरों का इतिहास जानने के लिए मंदिरों, शिलालेख प्रशस्ति, प्रतिमालेख और चैत्य-परिपाटी स्तवनादि से बड़ी सहायता मिलती है।

जैसलमेर में सर्वप्रथम पार्श्वनाथ जिनालय निर्माण सेठ जगद्धर का गौरवपूर्ण वंश परिचय ताड़पत्रीय ग्रंथ-प्रशस्तियों के आधार पर दे रहा है।

ऊकेशवंश में आषाढ़ सेठ महर्द्धिक और धर्मिष्ठ हुए हैं। वे पहले महेश्वर धर्म को मानने वाले माहेश्वरी थे, जो प्रतिदिन पाँच सौ याचकों, पथिकों को घृत व अन्नदान करते थे। इन्होंने दम्भी व्यास की दुष्टता देखकर माहेश्वरत्व छोड़ दिया, क्योंकि लघुकर्मी थे। अतः उपकेशपुर में वीतराग मुनिपुङ्गवों से सम्यक्त्वरत्न प्राप्त कर आर्हत् धर्म स्वीकार कर सपरिवार श्रावक हो गए। इनके पुत्र जामुबाग और उनका पुत्र सेठ बोहित्य हुआ इसके पद्मदेव और वीह्ल नामक दो पुत्र थे। सेठ पद्मदेव भार्या देवश्री का पुत्र सुप्रसिद्ध सेठ क्षेमंधर हुआ। पद्मदेव ने नागौर के पास कुडिलुपुर में जिनालय निर्माण कराया। क्षेमंधर ने मरुकोट दुर्ग में मणिधारी दादा श्री जिनचंद्रसूरिजी से प्रतिबोध पाकर विधि मार्ग स्वीकार किया और सं. १२१८ वैशाख सुदि १० को धर्कट वंशीय पार्श्वनाथ के पुत्र सेठ गोल्लककारित चंद्रप्रभ जिनालय की प्रतिष्ठा दण्ड-कलश ध्वजारोहण के समय ५०० द्रम्म देकर माला ग्रहण की। उस समय वहाँ राजासिंहबल का राज्य था।

सेठ क्षेमंधर के दो पुत्र महेन्द्र और प्रद्युम्न इतः पूर्व दीक्षित हो चुके थे, वे चैत्यवासी-परंपरा में थे। अपने पुत्र प्रद्युम्नाचार्य को सुविहित विधिमार्ग में लाने के लिए इन्होंने सं. १२४४ में आशापल्ली में श्री जिनपतिसूरीजी के साथ शास्त्रार्थ कराया और विधिचैत्यों की गरिमा मान्य कराई पर वे विधि मार्ग में न आए। अजयपुर के विधि चैत्य में मण्डप-निर्माण हेतु सेठ क्षेमंधर ने सोलह हजार रुपए प्रदान किए और हजारों पारुत्थक (मुद्रा)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

व्यय कर अपने कुल के श्रेयार्थ तीर्थ यात्राएँ कीं। इनके यशोदेवी और हंसिनी नामक भार्याएँ थी। यशोदेवी के पुत्र जगद्धर ने जैसलमेर में देवविमानतुल्य पार्श्वनाथ जिनालय का निर्माण कराया। इनकी स्त्री का नाम साढलही था। जिसकी कोख से १ यशोधवल, २ भुवनपाल, ३. सहदेव नामक पुत्र और आसुला, हीरला नामक दो पुत्रियाँ हुईं। सेठ, यशोधवल, मरुस्थल-कल्पद्रुम कहलाते थे। वे प्रतिदिन देशान्तरों से आए हुए श्रावकों की भोजनादि से भक्ति करते थे। दूसरे भ्राता भुवनपाल बड़े पुण्यात्मा थे। छह मास भूमिशय्या, एकासनत्व, स्नानत्याग, षडावश्यक, नवकार मंत्र स्मरण, ब्रह्मचर्य आदि अनेक नियमों के धारक थे। सं. १२८८ आश्विन सुदि १० को पालनपुर में गुरु महाराज श्री जिनपतिसूरि के स्तूपरत्न पर ध्वजारोहण कराया। श्री भीमपल्ली में सौधशिखरी प्रासाद निर्माण कराके श्री जिनेश्वरसूरिजी के करकमलों से वीरप्रभु की स्थापना कराई[२]। इनकी पत्नी पुण्यिनी बड़ी पुण्यात्मा थी, जिसके त्रिभुवनपाल और धीदा नामक पुत्र हुए। उनके क्षेमसिंह और अभयचंद्र पुत्र हुए।

अपने गुरु श्री जिनेश्वरसूरिजी की श्रीसंघ सेना के सेनापति बने। और तीर्थयात्रा द्वारा अपने कुल पर अपने नाम का कलश चढ़ाया। उदारचेता भुवनपाल ने प्रत्येकबुद्ध-चरित्र लिखवाकर श्री जिनेश्वरसूरि को समर्पित किया। अभयचंद्र की भार्या लक्ष्मिनी थी और धीधा, जगसिंह, तेजा नामक तीन पुत्र और पद्मिनी व कुमारिका दो पुत्रियाँ एवं साचा आदि पौत्र-प्रपौत्र हुए। सेठ जगद्धर द्वारा श्रीमालनगर में समवशरण, प्रतिष्ठा व शांतिनाथ स्थापना के उल्लेख मिलते हैं।

सेठ क्षेमंधर की द्वितीय पत्नी हंसिनी के १ भीमदेव २ पदम ३ पुरिसड़ पुत्र थे। पद्म की स्त्री जयदेवी और पुत्र का नाम साढल महाश्रावक था।

उपर्युक्त इतिवृत्त जैलसमेर में सर्वप्रथम देवविमान सदृश पार्श्वनाथ जिनालय निर्माण कराने वालों का है जो जैसलमेर ज्ञानभण्डार की कई ताड़पत्रीय ग्रंथप्रशस्तियों एवं युग-प्रधानाचार्य -गुर्वावली के आधार पर लिखा गया है। इस समय न तो कोई शिलालेख-प्रशस्ति आदि उपलब्ध है और न उस मंदिर का पता है। जिनालय निर्माता का गोत्र भी नहीं लिखा है। अत: बोहित्थ के वंशज बोथरा गोत्र समझना चाहिए।

वर्तमान में जो सर्वप्राचीन कलापूर्ण और मुख्य जिनालय श्री पार्श्वनाथ स्वामी का है। वह खिलजी काल में मुसलमानों के अधिकार में जैसलमेर था। वह ध्वस्त किए जिनालय के स्थान में ही बना या अन्यत्र यह पता नहीं, क्योंकि वर्तमान जिनालय रांका सेठ परिवार द्वारा निर्मित है। जिस की विस्तृत, प्रशस्ति में उनकी वंशपरंपरा दी गई है।

यह प्रतिष्ठा सं. १३१७ वैशाख सुदि१० को हुई थी। श्री अभयतिलक गणि ने अपने महावीररास में लिखा है कि भुवनपाल ने यह सौधशिखरी जिनालय राय मंडलिक के आदेश से बनवाया और मण्डलिकविहार नामक मंदिर बनवाकर अपने पिता श्री जगद्धर शाह के कुल में कलश चढ़ाया।

भीमपल्ली पुरिविहिभुयणि अनु संठिउ वीर जिणंदो,
तसुउवरि भुयण उतुंग वर तोरणं, मंडलिराय आएसि अइ सोहणं
साहुणा भुवणपालेण करावियं, जगधर साहुकुलि कलश चाडावियं।
हेम धय दंड कलसो तहि कारिओ, पहु जिणेसर सूरि पासि पइठाविओ
विक्कमेवरिसि तेरहइ सतरोतरे (१३१७) सेय वइसाह दसमीइ सुहवासरे

इसी वंश में सा. वीरदेव बड़े नामांकित व्यक्ति हुए, जिनके द्वारा सं. 1381 में श्री जिनकुशल सूरिजी के सान्निध्य में शंगत्रुजयादि तीर्थों का संघ निकालने का विशद वर्णन मिलता है। उसके भाई सा. मालदेव व हुलमसिंह,धनपाल, सामल के नाम भी पूर्वजों के रूप में आए हैं। सं. 1377 में श्री जिनकुशलसूरिजी के पट्टाभिषेक के समय भी वीरदेव पत्तन में उपस्थित हुए थे। इन्हें भीमपल्ली के मुकुटमणि साधुराज सामल के पुत्र थे, लिखा है।

श्री नाहरजी के जैनलेखसंग्रह तृतीय भाग में प्रकाशित अभिलेखों के अतिरिक्त रांका सेठ परिवार द्वारा निर्मापित वर्तमान जिनालय गत लेखों के अतिरिक्त निम्नोक्त कल्पसूत्र लेखनप्रशस्ति भी इसी परिवार से संबंधित होने से यहां उद्धृत की जा रही है।

कल्पसूत्र-लेखन-प्रशस्ति

वृक्षवच्चारुशाखायुक्..वासप्रयोजवत्।
श्रीमानूकेशवंशोऽयं, चिरं नंद्यान् महीतले।।१।।
तत्र च-श्रेष्ठिरंककशाखायां, यक्षदेवस्य नन्दनः।
अभूत् झांबटकाभिख्य, तत्सूनुर्धांधलोत्तमः।।२।।
श्रीगजू भीमासिघाख्यावभूतां धांधलाङ्गजौ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गजूकस्य गणदेवो, मोक्षदेवस्तया सुतौ।।३।।
मेघा जेसल मोहण, नामान इतिच विख्याता।
गणदेवस्य रसालाश्च, चत्वारोजज्ञिरे पुत्राः।।४।।
जेसलभार्यापूरी, तत्पुत्रास्त्रय इमे गुणैः ख्याता।
लक्ष्मीवन्तो यशसा, भुवनत्रयमण्डनप्रवराः।।५।।
आम्बाकः प्रथमस्तत्रापरो जीन्दाभिधस्तथा।
तृतीयो मूलराजाख्यो जातो पुण्य जनाग्रणी।।६।।
आंबराजस्यभार्येयं, बहुरी तत्सुताविमौ।
शिवराज महाराजो, राणी श्याणी च पुत्रिके।।७।।
वल्लभा मूलराजस्य माल्हणदेऽभिधा बुधा।
सहस्रराज तत्सूनुः श्रीदेवगुरुभक्तिभाक्।।८।।
मोहनभार्या पुंजी च तु तत्सूनवः चत्वारः।
कीहट पासा देल्हा, धन्ना संघाधिप...ऽमीः।।९।।
कीहटभार्या जाता, कर्पूरीतत्सुता चत्वारः।
प्रथमश्चोसभदत्ता धामाकान्हाख्यजगमालाः।।१०।।
सरस्वतिकौतिगदेव्या भार्ये साधु पासदत्तस्य।
वील्हाविमलाबंधु, सरस्वतीनन्दनौ जातौ।।११।
कौतिगदेवीपुत्राः कर्मणहेमाख्यठक्कुराः प्रवरा।
देल्हाकस्योत्पन्नौ, पुत्रौ जीवन्द कुम्पाख्यौ।।१२।।
आल्हीसुवल्लभाजज्ञे, धन्ना संघपतेस्तयोः।
जगपालस्तथानाथू अमराख्यौ सुता इमे।।१३।।
धन्यस्य जगपालस्य, सतीनायकदे प्रिया।
सुते चंद्रावली हस्तू, इत्याख्ये च मनोहरे।।१।।
नायकदेश्राविकया गुरुवरजिनभद्रसूरिवचनेन।
पुण्यार्थमलेखि तथा सन्देहविषौषधिग्रन्थः।।२।।
इतश्च-आम्ब्रको मुनि चतुर्दशे[१४] शते बाणे[५] बाहु[२] मिते वत्सरे
करोत्।देवराजपुरि यात्रयोत्सवं श्री
जिनोदयागुरूपदेशनात्।।१४।।
उच्चानगर्यां यवनाकुलायां, यः कारयामास महाप्रतिष्ठां
मुनि[७]द्वि[२]विद्यो[१४]प्रमितेशुभाब्दे,विस्तारतः सूरि जिनोदयाख्यैः।।१५।।
तथा मनुष्यलक्षं...ः स्फुटघोटकपेटकम्
शकटानां सहस्राणि मीलयेत्वा महाजनम्।।१६।।
मार्ग्वाणानां समस्ताशा...आपूरयन् धनम्।
सद्दानधारया वर्षन् मार्गभाद्रपदांबुवत्।।१७।।
चतुर्दशशते वर्षे षट्त्रिंशदधिके वरे(१४३६)
श्री जिनराजसूरीणां पादाब्जं सिरसा स्पृशत्।।१८।।

श्री आंबराज आदाय संघेशपदमुत्तमम्।
शत्रुञ्जयोज्जयञ्जन्तादि तीर्थे यात्रा विनिर्ममे।।१९।।
श्रेष्ठी कीहटधन्नाद्यैमातृपूंजीयुतेस्तथा।
श्री शत्रुञ्जयतारङ्गारासणेषुनुता जिना।।२०।।
पुनरस्तोकलोकयो धनेश्वरमनोहरम्।
अत्याडम्बरतः संघं विधाय शकटोद्भटम्।।२१।।
साधर्मिकादिवात्सल्यं कुर्वन्दानं ददन्मुदा।
श्री संघेशपदं लात्वा श्री जिनराजसूरियुक्।।२२।।
चतुर्दशे शते वर्षे नन्द[९]वेद[४]मिते[५] करोत्।
यात्रां शत्रुंजयेतीर्थे रैवते चापि कीहटः ।।२३।।
तथा श्रीकीहटाद्यैश्च पुञ्जीमातुः सुबान्धवैः।
मालारोपणोत्सवोऽकारि श्रीजिनराजसूरिभिः।।२४।।
तदावृतोत्सवो भावसुन्दरस्य यतेरपि।
चतुर्दशशते वे[४]दबाण[५]प्रमितवत्सरे।।२५।।
धन्नाधामाभिधानाभ्यां पंचम्युद्यापनं महत्
सागरचंद्रसूरीणामुपदेशात्कृतं वरम्।।२६।।
इतश्चास्मिन् महादुर्गे चतुर्दशशते मुदा।
त्रिसप्ततितमे वर्षे सफलीकुर्व्वता धनम्।।२७।।
संघाधिपतिना श्रेष्ठि धनराजेन साधुना
जगपालसुताद्यात्मपरिवारयुतेन वै।।२८।।
सर्वसंघंसमाकार्य नानादेशनिवासिनम्।
विशिष्टा सुप्रतिष्ठाप्यं बिम्बानांकारितोत्तमा।।२९।।
एवंविधानिसद्धर्म कार्याणि प्रतिवासरम्।
कुर्वाणास्ते चिरं श्राद्धाः विजयन्ते महीतले।।३०।।
इतश्च--श्री वीरतीर्थंकर राजतीर्थे स्वामीसुधर्मागणभृद्बभूव।
तदन्वये चन्द्रकुलावतंश उद्योतन श्रीगुरुवर्द्धमानः।।३१।।
जिनेश्वरः श्रीजिनचन्द्रसूरि संविग्नभावोऽभयदेवसूरि।
वैरंगिक श्री जिनवल्लभोऽपि, युगप्रधानो जिनदत्तसूरिः।।३२।।
भाग्याधिकः श्री जिनचंद्रसूरि क्रियाकठोरो जिनपतिसूरि।
जिनेश्वरसूरिरुदारचेताः जिनप्रबंधोऽपितपोपनंता।।३३।।
प्रभावकः श्रीजिनचन्द्रसूरिः सूरिर्जिनादिः कुशलावसानः।
पद्मापदं श्री जिनपद्मसूरिर्लब्धेर्निधानं जिनलब्धिसूरिः।।३४।।
सैद्धान्तिकः श्रीजिनचन्द्रसूरिर्जिनोदयःसूरिरभूदभूरि।
ततः परं श्रीजिनराजसूरिर्वाकचातुरीरंजितदेवसूरिः।।३५।।
स्वबंधुजिंदामिधमूलराजः संयुक्तसंघाधिप आंबराजः।
अलेखयत्पुस्तकमात्ममातृपूंजी सुपुण्याय गिराथ तेषां।।३६।।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

प्रशस्ति का संक्षिप्त सार

उपकेशवंश की श्रेष्ठि-रांका शाखा/गोत्र के यक्षदेव के पुत्र झांबट के पुत्र धांधल हुए। उनके पुत्र गजू और भीमसिंह थे। गजू के पुत्र गणदेव और मोक्षदेव थे। गणदेव के मेघा, जेसल, मोहन और रसाल हुए। जेसल की भार्या पूरी के तीन पुत्र प्रसिद्ध गुणवान, धनवान और तीन लोक में मण्डनस्वरूप थे। उनके नाम आंबा, जींदा और मूलराज थे। आंबरज की भार्या बहुरी के दो पुत्र शिवराज और महीराज तथा राणी और श्याणी दो पुत्रियाँ थीं, मूलराज की प्रिया माल्हण दे तथा पुत्र सहस्त्रराज देवगुरु भक्त था।

मोहन की भार्या पूंजी के चार पुत्र ऋषभदत्त, धामा, कान्हा और जगमाल थे। पासदत्त के सरस्वती और कौतिग देवी दो स्त्रियाँ थी। सरस्वती के वील्हा और विमल दो पुत्र थे। कौतिगदेवी के पुत्र कर्मण, हेमा और ठकुरा थे। धन्ना संघपति की वल्लभा आल्ही थी, जिसमें पुत्री हस्तू, चंद्रावली मनोहर थी। नायकदे श्राविका ने गुरुवर श्री जिनभद्रसूरिजी के वचनों से संदेहविषौषधि ग्रंथ लिखवाया।

आंबा ने सं. १४२५ में श्री जिनेश्वरसूरि गुरु के उपदेश से देरावर दादा तीर्थ यात्रोत्सव किया। उच्चा नगरी जो यवना कुल थी, उसमें से १४२७ में श्री जिनोदयसूरिजी से प्राण-प्रतिष्ठा करवाई तथा लाख मनुष्य..घोड़े, हजारों गाड़ों के साथ महाजनों ने मिलकर प्रयाण किया। याचकजनों की आशा पूर्ण की। भाद्रव मास की भांति धन की दानवृष्टि की।

सं. १४३६ में श्री जिनराजसूरि महाराज की चरण-वंदना संघ सहित की। शत्रुंजय, गिरनार तीर्थों की यात्रा करके आंबराज आदि ने संघपति पद प्राप्त किया। सेठ कीहट, धन्ना आदि ने माता पूंजी सहित शत्रुंजय, तारंगा, आरासण आदि तीर्थों की यात्रा की। फिर बहुत से धनाढ्य लोगों के साथ संघ सहित सुसज्जित मनोहर गाड़ियों में तीर्थयात्रा करते हुए स्वधर्मवात्सल्य एवं दान-पुण्य करने में सतत् संलग्न रहकर श्री जिनराजसूरिजी महाराज से संघपति पद प्राप्त किया।

सं. १४४९ में सेठ कीहट आदि ने माता पूंजी तथा बंधु बांधवों सहित शत्रुंजय, गिरनार यात्रा कर श्री जिनराजसूरिजी के सान्निध्य में मालारोपण महोत्सव मनाया एवं यति भावसुंदर का दीक्षोत्सव संपन्न हुआ। सं. १४५४ में धन्ना, धामा द्वारा पंचमी तप का उद्यापन आचार्य श्री सागरचंद्रसूरि के उपदेश से किया। सं. १४७३ में इसी महादुर्ग जैसलमेर उत्सवादि के आयोजन में धन सफल किया। संघपति सेठ धनराज ने अपने पुत्र जगपाल आदि के साथ नाना देश निवासी संघ को आमंत्रित कर प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा करवाई। इस प्रकार प्रतिदिन धार्मिक कार्य करते हुए श्राक्क पृथ्वी पर चिरकाल जय विजयी हो।

इसके पश्चात् भगवान महावीर के शासन में गणधर सुधर्मा स्वामी की परंपरा में चंद्रकुल के उद्योतन सूरि से श्री जिनराजसूरि पर्यंत पट्टधरों की नामावली देने के पश्चात् ३६वें श्लोक में स्वबंधु जिंदा, मूलराज सहित आंबराज ने यह ग्रंथ माता पूंजी और अपने पुण्यार्थ लिखाने का उल्लेख किया है।

"संवत् १४९७ वर्षे अश्वयुजिमासिश्रीवलक्षपक्षे १० विजयदशम्यां सोमे अद्येह श्रीजेसलमेरुमहादुर्गे श्रीवैरिसिंह भूमृति राज्यं प्रति पालयति सतिश्रीतरहागच्छगगनदिननाथायमान

श्रीजिनराजसूरिपट्टसारसहकारवनवसंतायमानश्रीमन्श्री जिनभद्रसूरीश्वरविजयराज्ये श्रीकल्पपुस्तक प्रशस्तिः समर्थिता। शिवमस्तु सर्वजगतः।।श्री।।श्री।।"

(श्री जेसलमेरनगरस्य बृहत्खरतटगच्छोपाश्रये पंचायती भंडारेप्रति।)

किले के वर्तमान मंदिरों में सर्वप्राचीन श्री पार्श्वनाथ जिनालय है, जिसका नाम लक्ष्मणबिहार तत्कालीन महारावल लक्ष्मणजी के नाम से यह खरतरप्रासादचूडामणि प्रसिद्ध किया। सं. १४५९ में निर्माण प्रारंभ होकर सं. १४७३ में १४ वर्षों में पूर्णाहुति हुई।

श्री पार्श्वनाथ मंदिर निर्माताओं द्वारा दो प्रशस्तियाँ सुशोभित हैं जो नाहरजी के लेखांक २११२ और २०१३ में प्रकाशित हैं। जिनके आधार पर उपरिलिखित वंशवृक्ष दिया गया है, जो प्रकाश्यमान इस कल्पसूत्र प्रशस्ति जो सं. १४९७ में लिखी गई, से समर्थित है। यह २२ और २४ पंक्तियों में शिलोत्कीर्णित है। उपर्युक्त वंशवृक्ष में कल्पसूत्रप्रशस्ति में प्राप्त पत्नियों और पुत्रियों के नाम भी जोड़ दिए गए हैं। गणदेव के पुत्रों में मोहन के बाद वेडूर के स्थान पर कल्पसूत्रप्रशस्ति में रसाल नाम लिखा है। कुछ नाम अन्य लेखों से भी समर्थित होते हैं।

पूज्य श्री जिनधरणेन्द्रसूरिजी महाराज के दफ्तर में इस रांका सेठ परिवार से संबंधित जो कवित्त मिला है, उसे यहाँ उद्धृत किया जा रहा है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कवित्त

कीहट नो जिण भुवण जेण मंइयो जेसाणै।
तासु वंश जावड़ सुजस दारव्यौ भुणियाणै।।
सोनेरूपै साह सोह जिण सासण चाढ़ी।
तेजपथग पुहकरण भला जु सेठ भराडी।।
सूरै समरै नोड़राज सोड काम उत्तम कीया।
टापर नै भोजै एण परि जैतारण जग जस लीया।।

इस कवित्त के नामों में तथा आगे दिए जाने वाले वंशवृत्त के नामों में (कीहट के पुत्रों के नामों में) साम्यता देखी जाती है। विशेष शोध आवश्यक है।

वंशवृक्ष

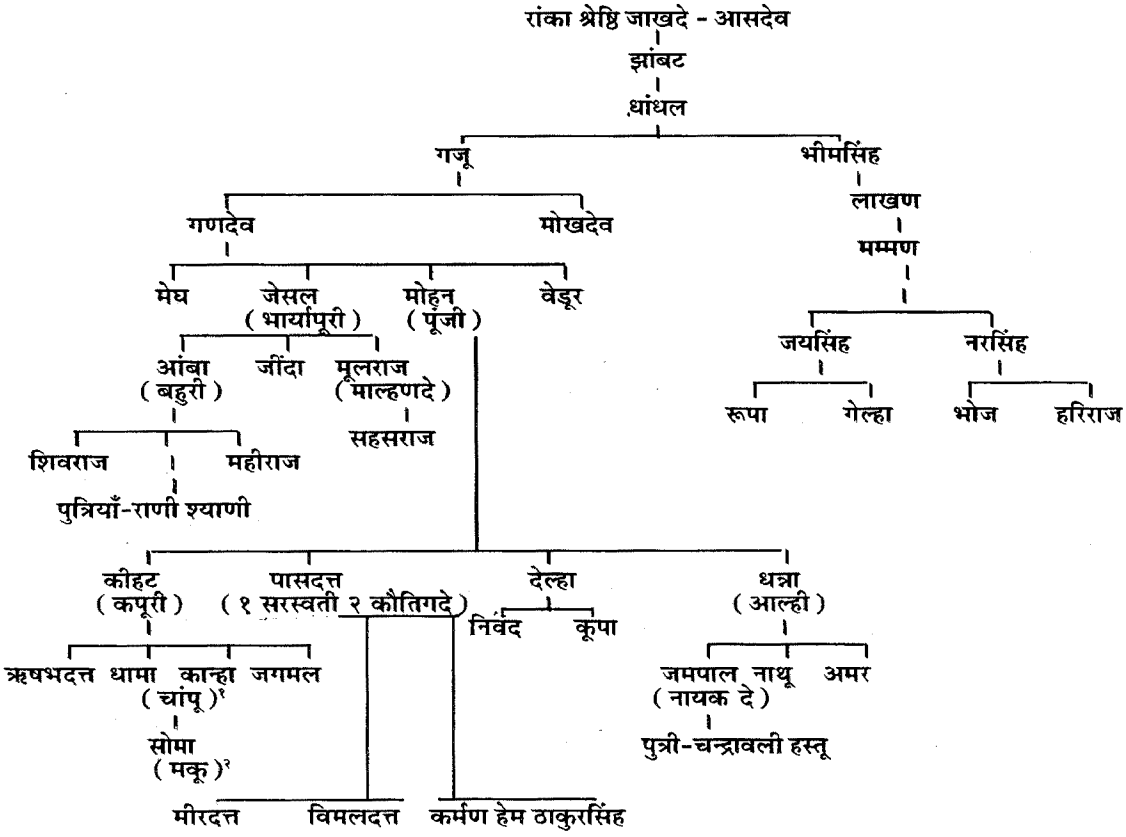

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

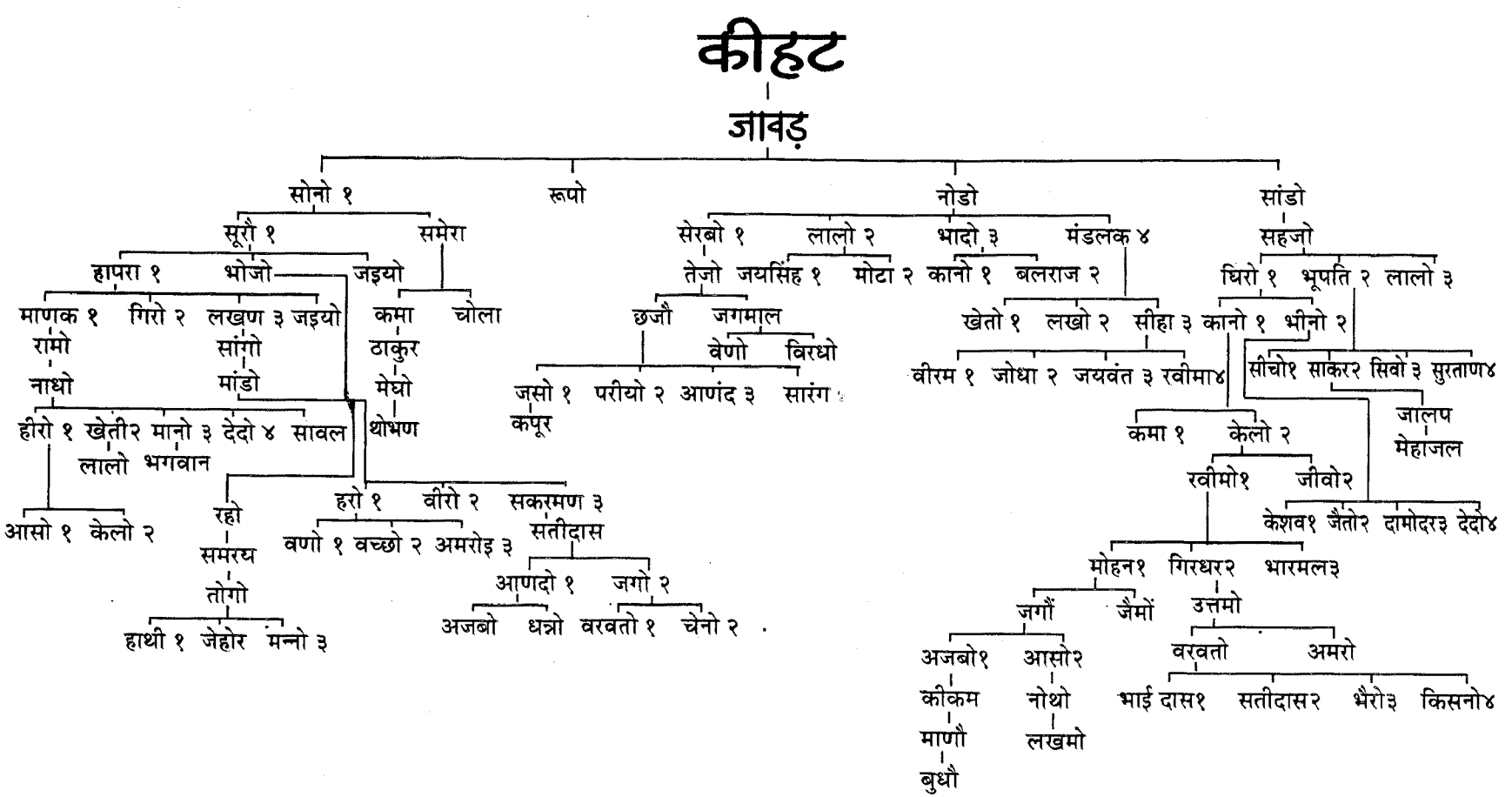

रूपा जावड़ रो केड़ सुखा रे साथ लुको थयो पुर मांडल में रहे छे।

Jain Education International
For Private & Personal Use Only
www.jainelibrary.org

सेठ झांझण

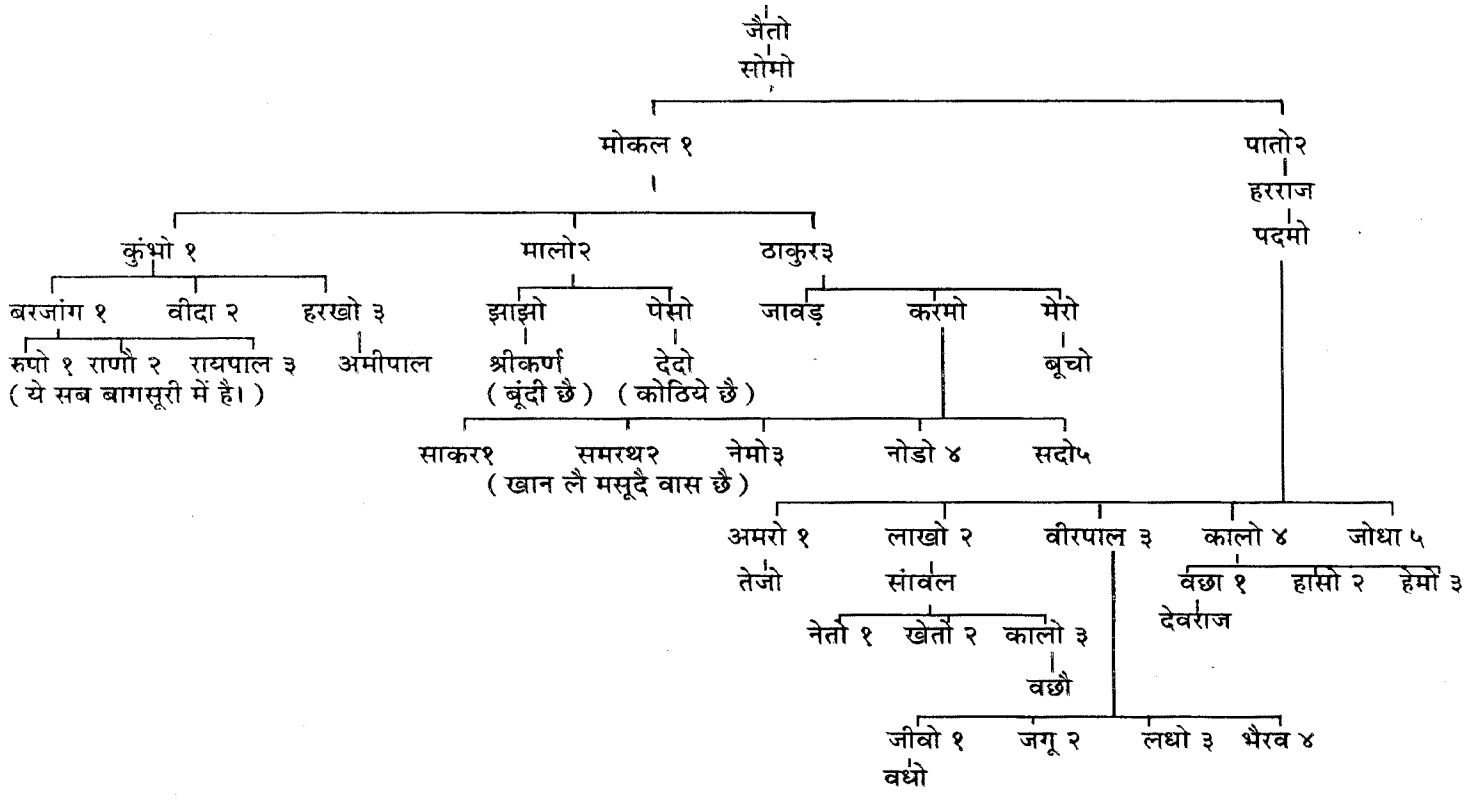

वृद्ध आघगणे जैतारण रा.....

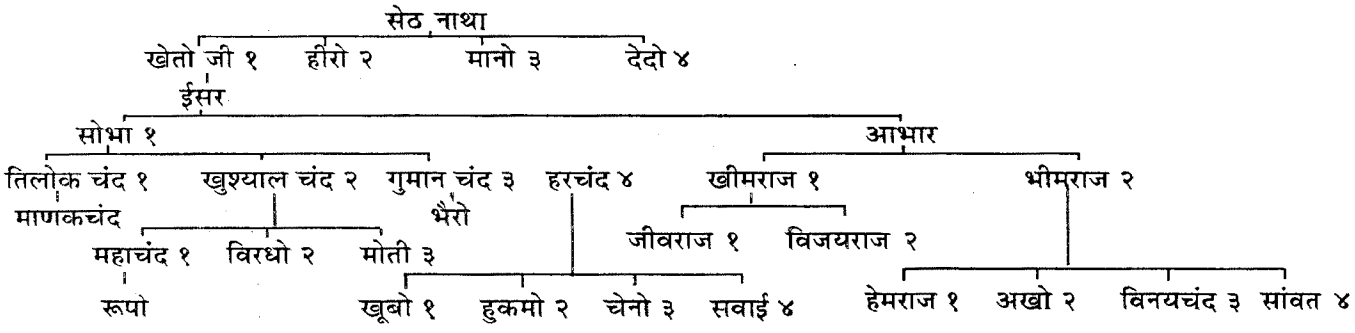

यह वंशवृक्ष पूज्य श्री जिनधर्मेन्द्रसूरिजी महाराज के दफ्तर के आधार पर तैयार किया गया है। यद्यपि शिलालेखों तथा कल्पसूत्रप्रशस्ति के तत्कालीन उल्लेखित कीहट के वंशजों के नामों में नामांतर हो सकता है। यह अंतर दो पत्नियों या ऐसे अन्य किसी कारण से हो सकता है ? इन वंशावृक्षों में जहाँ तक नाम आए हैं, उनके बाद उनके वंशज वर्तमान के नाम जोड़कर इन्हे पूरा कर सकते हैं।

श्री पार्श्वनाथ भगवान के वर्तमान जिनालय तथा इससे पूर्व के जिनालय का वर्णन ताडपत्रीय ग्रंथों तथा युगप्रधानाचार्य गुर्वावली से लिया गया है तथा वर्तमान का इतिहास श्रीपूज्य जी के दफ्तर, कल्पसूत्रप्रशस्ति तथा शिलालेखों के आधार पर लिखा गया है। जैसलमेरके कलापूर्ण जैनमंदिर तो अपने कला एवं वैभव के लिए विश्वविश्रुत हैं।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org